VAAGDHARA

परंपरागत किस्मे एवं जैविक कृषि तकनीकी

वाग्धारा, बांसवाड़ा

अनुक्रमणिका

क्र.स.	परिचय/विषय	पृष्ठ संख्या
1.	मक्का	6
2.	धान	8
3.	अरहर	10
4.	कपास	12
5.	सोयाबीन	14
6.	मूंगफली	16
7.	उड़द	18
8.	गेहूं	20
9.	चना	23
10.	जायद मूंग	25
जैविक विधिया		**27**
11.	बीजाम्रत	27
12.	जीवाम्रत	27
13.	संजीवक	28
14.	पंचगव्य	28
15.	अमृत पानी	28
16.	नीमास्त्र	29
17.	आग्नेयास्त्र	29
18.	ब्रह्मस्त्र	29
19.	नाडेप	30
20.	वर्मीकम्पोस्ट	30
21.	कल्चर	31

राजस्थान, गुजरात एवं मध्यप्रदेश स्थित जनजातीय उपयोजना का कृषि क्षेत्र एवं पारंपरिक फसले

भारतीय संविधान की 5 वीं अनुच्छेद सूची में वर्णित राजस्थान के दक्षिणी भू भाग में स्थित जिले बांसवाडा, डूंगरपुर, प्रतापगढ़, गुजरात के उत्तरी भू भाग के पंचमहाल का दाहोद, झालोद का क्षेत्र एवं पश्चमी मध्यप्रदेश स्थित रतलाम, झाबुआ का क्षेत्र जनजातीय उपयोजन (टीएसपी) के नाम से भी जाना जाता है।

यह क्षेत्र अपनी प्राकृतिक संपदाओ –वन क्षेत्र, नदी, नाले, तालाब,पहाड़ियों एवं पशु संपदा से भरपूर रहा है। अरावली पर्वत माला के दक्षिणी –पूर्वी भू भाग में स्थित यह क्षेत्र अधिक बरसात वाले क्षेत्र के नाम से भी जाना जाता है। यहाँ औसत वर्षा 555 मिलीमीटर से 1052 मिलीमीटर तक मानसून मौसम जून से प्रारंभ होकर सितम्बर मध्य उपयोग तक कुल 100 दिनों में 42–43 वर्षा दिनों में होती है। क्षेत्र में कुएं, तालाब, नहरे आदि सिंचाई के मुख्य स्रोतों का प्रयोग करते हुए कुल क्षेत्र का लगभग 35 प्रतिशत भू भाग सिंचित है। खरीफ फसले अधिकतर वर्षा आधारित खेती पर निर्भर है। यहाँ का न्यूनतम औसत तापमान 11^{0}C (जनवरी) से 26^{0}C (जून) एवं उच्चतम औसत तापमान 21.8^{0}C(जनवरी) से 43.8^{0}C (मई) तक रहता है। इस क्षेत्र में लाल, काली, मध्यम लाल व मिश्रित लाल किस्म की मध्यम वर्गीय कणीय मिट्टी प्रमुखतया से पाई जाती है। वर्षा के दिनों में अधिकतर मिट्टी का क्षरण होता है। पर्वतीय भागो में चट्टानें, पर्वतों के ढलान में उथली मिट्टी एवं घाटियों और मैदानों में गहरी मिट्टी इस क्षेत्र में प्रमुखतया से पाई जाती है। यहाँ की मिट्टी में नत्रजन एवं जैविक कार्बन का स्तर मध्यम है।लाल मिट्टी में फास्फोरस का स्तर कम है तथा काली मिट्टी में मध्यम है। काली मिट्टी में चौड़ी और गहरी दरारे पड़ जाती है जिससे उनकी सतहों पर नमी का हास् होता है।

क्षेत्र की प्रमुख खरीफ फसले मक्का, सोयाबीन, धान, कपास एवं खरीफ दाले जैसे – उड़द, अरहर, चवला आदि है तथा रबी में गेहूं, चना, हरी मटर रबी मक्का तथा जायद में मूंग की खेती के अतिरिक्त क्षेत्र में मोटे अनाज जैसे रागी, कांगनी, कोदरा इत्यादि की खेती भी समय समय पर एकल एवं मिश्रित फसल पद्धति से होती है। खेती समतल खेतो के साथ साथ पहाड़ियों की तलहटी इत्यादि भू भाग पर उबड़ खाबड़ क्षेत्रों में बहुलता से होती है।

क्षेत्र में स्थित आदिवासी समुदाय फसलो की उन्नत किस्मो के अतिरिक्त अपनी पारंपरिक खेती एवं उसके संरक्षित बीजो से खेती के लिए भी जाना जाता है। प्रस्तुत कार्यमाला क्षेत्र में पारंपरिक फसले, बीज तथा जैविक खेती की विधियों की उन्नत तकनीकी की एक प्रस्तुति है।

मक्का

मक्का की परम्परागत किस्मे एवं उनकी विशेषताए

गांगडी मक्का—सफ़ेद दानो वाली यह एक संकुल किस्म है। यह किस्म 85—90 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। वर्षा पोषित क्षेत्र में उगाई गई इस किस्म से 25— 35 क्विंटल प्रति हेक्टेयर की उपज प्राप्त की जा सकती है। इसके भुट्टे पौधे के मध्य भाग में एवं पौधों की लम्बाई 160—200 सेमी.तक होती है। इसके पूरे पके हुए दाने थोड़े कड़क एवं मध्यम आकार के गोलाई लिए हुए होते है। बरसात के आगमन के साथ सही समय पर वुबाई के लिए यह एक उत्तम किस्म है।

साठी—जल्दी पकने वाली यह एक संकुल किस्म 75—85 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। इस किस्म के भुट्टे पौधे के मध्य से नीचे के भागो में लगे होते है इस की उपज 18—20 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त होती है। इसके दाने छोटे, गोल एवं सफ़ेद होते है। देरी से वुबाई वाले अथवा कम पानी वाले खेतो के लिए यह एक उत्तम किस्म है।

दूध मोगर—मध्यम समय में पकने वाली यह किस्म 80—90 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। इसका दाना सफ़ेद, गोल व मध्यम आकार का होता है। इस किस्म के दाने पूरे पके हुए होंने के वाबजूद भी बहुत ही नरम होते है इसलिए इसको संग्रहित कर के रखते समय बहुत ही सावधानी रखनी पड़ती है। इसके भुट्टे व रोटी नरमाई लिए हुए होती है। इस किस्म से 25 —30 क्विंटल / हेक्टेयर तक उपज प्राप्त हो जाती है।

पीली मक्का—जल्दी पकने वाली यह किस्म 80—85 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। वर्षा पोषित क्षेत्र में इसकी उपज 20—30 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त हो जाती है। इसका दाना पीला व मध्यम आकार का होता है एवं पौधे की लम्बाई 160—180 सेमी. तक होती है। इसके हरे भुट्टे खाने में व इसकी रोटी पीली बनती है। स्वास्थ्य की दृष्टि से यह एक उत्तम किस्म है।

मिट्टी

मक्का खरीफ मौसम में उगाई जाने वाली एक प्रमुख पारंपरिक फसल है। यह लगभग सभी तरह की मिट्टी मे बोई जा सकती है, परन्तु इसके लिए बलुई मिट्टी सर्वोत्तम मानी जाती है। ऐसी मिट्टी जिसकी जल धारण क्षमता सर्वोत्तम हो साथ ही उसमे जल भराव की समस्या ना हो सर्वोत्तम मानी जाती है।

खेत की तैयारी एवं खाद की मात्रा

सर्वप्रथम एक जुताई मिट्टी पलटाऊ हल से करने के बाद 1 या 2 जुताई देशी हल से करनी चाहिए। इसकी वुवाई के 10—15 दिन पहले गोबर की अच्छी तरह से सड़ी हुई देशी खाद खेत मे अच्छी तरह मिलकर डालनी चाहिए। गोबर की खाद की मात्रा 10—15 टन / हेक्टेयर,वर्मीकम्पोस्ट 8—10 क्विंटल / हेक्टेयर व नीम की खली का प्रयोग 200 किग्रा. / हेक्टेयर की दर से करना चाहिए। वर्मीकम्पोस्ट की कुल मात्रा का 50प्रतिशत एवं नीम की खली का प्रयोग बुवाई से पूर्व जुताई के समय करना चाहिए।

बीज दर एवं बुवाई

अच्छा उत्पादन लेने के लिए अच्छी गुणवत्ता वाले बीजो का चयन करना चाहिए। बीज की मात्रा 20 —25 किग्रा. / हेक्टेयर होनी चाहिए। मक्का की बुवाई जुलाई के प्रथम या द्वितीय सप्ताह में बारिश के आगमन के साथ ही करना चाहिए। देरी से वुबाई करने पर उपज में कमी होती है।

फसल अंतरण

मक्का फसल में बुवाई हेतु कतार से कतार की दूरी 60 सेमी. एवं पोधे से पोधे की दुरी 20 सेमी रखनी चाहिए। बीजो को बीजाम्रत, एजोटोबेक्टर एवं पी.एस.बी. कल्चर से उपचारित कर वुबाई करनी चाहिए, जिसकी उपचार एवं प्रयोग विधि पुस्तिका के अंत में दी गई है।

खरपतवार नियंत्रण

खरीफ ऋतु में सबसे मुख्य समस्या खरपतवारो की होती है। ये मक्का की फसल के साथ प्रतिद्वंदता के चलते मुख्य फसल मक्का को ठीक तरीके से बढने नहीं देते है, जिससे उत्पादन में कमी होती है। अतः समय पर खरपतवार नियंत्रण करना बहुत ही आवश्यक होता है। अतः मक्का की बुबाई के 15— 20 दिन बाद खरपतवार(निदाई) निकालने चाहिए तथा दूसरी निदाई गुड़ाई बुबाई के 30—35 दिन बाद करनी चाहिए। वुबाई के 50—55 दिनों बाद तीसरी गुड़ाई कर खरपतवार नियंत्रण करना चाहिए।

खड़ी फसल में खाद देना

खड़ी फसल में गौ मूत्र 10 प्रतिशत की दर से छिडकाव बुबाई के 30 व 45 दिन बाद करना चाहिए। खड़ी फसल में पंचगव्य का 3 प्रतिशत की दर से छिडकाव बुबाई के 30 व 45 दिन बाद करना चाहिए।

मक्का की फसल के साथ अंतःफसल प्रयोग–अधिक उत्पादन एवं जमींन के अधिकतम उपयोग हेतु मक्का की जुड़वाँ पंक्ति पद्धति से बुवाई करनी चाहिए। इस हेतु मक्का की 2 कतारे 30–30 सेमी. पर रखते हुए दो कतारे उडद अथवा सोयाबीन की 30–30 सेमी. पर रख कर बुवाई करनी चाहिए। इस पद्धति में मक्का की फसल की पौध संख्या 83,333 रखते हुए मक्का का पूरा उत्पादन तथा उड़द या सोयाबीन की फसल उत्पादन से अतिरिक्त आय प्राप्त की जा सकती है।

कीट व रोगों का नियंत्रण

मक्के में मुख्यतया तना छेदक व सेन्य कीट लगते है। इसी प्रकार पौध व्याधियों में इसमें तना गलन एवं झुलसा रोग प्रमुख रूप से लगता है।

तना छेदक

तना छेदक नियंत्रण के लिए फसल अंकुरण के 10–20 दिन बाद नीम की पत्ती अथवा निम्बोली का रस के 10 प्रतिशत के घोल का छिडकाव करना चाहिए। इसके अतिरिक्त नीम के तेल 5 प्रतिशत की दर से छिडकाव करने पर रस चूसने बाले कीटो को नियंत्रित किया जा सकता है।

गलन रोग

पौध रोगो के नियंत्रण हेतु 10 ग्राम ट्रायकोडर्मा प्रति किलो गोबर की खाद में मिलाकर पौधों की कतारों में डाले।

नोट–जिन खेतो में तना गलन की समस्या बनी रहती है उन खेतो में ट्रायकोडर्मा उपचारित गोबर की खाद का प्रयोग खेत की तैयारी के समय ही करे। साथ ही उचित फसल चक्र अपनाकर फसलो को रोग मुक्त रखे।

उत्पादन

मक्का का उत्पादन 30–35 क्विंटल/हेक्टेयर तक फसल की उचित देखभाल उपरांत प्राप्त होता है।

धान

धान की परम्परागत किस्मे व उनकी विशेषताए

- **काली कमोद**– धान की यह पारंपरिक किस्म एक मीठी सुगंध लिए होती है। इस किस्म के धान की भूसी का रंग भूरा काला होता है। जिसके अन्दर की परत लाल होती है। इसके चावल का दाना छोटा, मोटा एवं मिठास लिए होता है। इस किस्म की बुवाई रोपाई वाले तरीके से नर्सरी बनाकर की जाती है। इस किस्म से उपज 40 क्विंटल /हेक्टेयर तक प्राप्त की जा सकती है।
- **जीरा चावल**–धान की इस किस्म का दाना छोटा, मोटा बिना सुगंध लिए हुए होता है। इस किस्म की भूसी का रंग हल्का भूरा होता है। यह किस्म रोपाई व सीधी बुवाई हेतु प्रयोग में लाई जाती है। इस किस्म की उपज 30–40 क्विंटल/हेक्टेयर तक प्राप्त होती है।
- **माल कमोद**–सीधी बुवाई बाले क्षेत्रों में प्रचलित धान की इस किस्म का दाना खुशबू लिए हुए होता है। इस किस्म से उपज काफी कम प्राप्त होती है किन्तु इसकी विशेषता के चलते यह किस्म वर्षापोषित क्षेत्रों में उगाई जाती है।
- **पाथरिया**–यह किस्म 90–100 दिनों में पककर 20–25 क्विंटल/हेक्टेयर की उपज देती है।इस किस्म के धान की बाहरी सतह भूरी–काली जबकि भीतरी परत ललाई लिए होती है इसके चावल का रंग सफ़ेद व दाना छोटा व मोटा होता है। इस किस्म के पौधों की ऊंचाई 60–75 सेमी. की होती है।

मिट्टी

धान की खेती सभी तरह की मिट्टी मे जा सकती है किन्तु इसकी काश्त हेतु बलुई मिट्टी सर्वोत्तम मानी जाती है। साथ ही ऐसी मिट्टी जिसकी जल धारण क्षमता सर्वोत्तम हो तथा उसमे जल भराव की समस्या ना हो धान की खेती के लिए उपयुक्त मानी जाती है।

खेत की तैयारी

धान की वुबाई के लिए खेत की एक जुताई मिट्टी पलटाऊ हल से करने के बाद 1 या 2 जुताई देशी हल से करनी चाहिए। इसकी वुवाई के 10–15 दिन पहले गोबर की खाद खेत मे अच्छी तरह मिलाकर डालनी चाहिए। गोबर की खाद की मात्रा 10–15 टन/हेक्टेयर,वर्मीकम्पोस्ट 8–10 क्विंटल/हेक्टेयर व नीम की खली का प्रयोग 200 किग्रा./हेक्टेयर की दर से करना चाहिए। वर्मीकम्पोस्ट की 50 प्रतिशत मात्रा व नीम की खली की 50 प्रतिशत मात्रा का प्रयोग जुताई के समय करना चाहिए

बीज दर एवं बुवाई –

धान की वुवाई मुख्यता नर्सरी लगा कर की जाती है । बुवाई हेतु 25 किग्रा /हेक्टेयर बीज की मात्रा पर्याप्त होती है। बीज की वुवाई से पहले उसका बीजोपचार करना आवश्यक है क्योकि बीजोपचार से उत्पादन बढाया जा सकता है। इसके लिए निम्न लिखित तरीको से बीजोपचार किया जा सकता है:–

गौ मूत्र की 250 मिली की मात्रा को 1 लीटर पानी में मिला कर बीजोपचार किया जाता है।

बीजाम्रत के द्वारा भी बीजोपचार किया जा सकता है। (बीजम्रत बनाने की विधि पीछे के पृष्ठो में दी गई है)

पौधों की रोपणी अथवा नर्सरी लगभग 25–30 दिन में तैयार हो जाती है। इसकी रोपणी हेतु जून के आखरी या जुलाई के प्रथम सप्ताह में नर्सरी में कर देनी चाहिए। नर्सरी से प्राप्त रोपणी पौधों को खेतो में अच्छी तरह गारा बनाकर उचित नमी में बुवाई कर लेनी चाहिए।

सीधी बुवाई हेतु 60–75 किग्रा./ हेक्टेयर बीजो की आवश्यकता होती है। सीधी बुवाई हेतु हल के पीछे 25 सेमी. की दूरी पर कतारों में बीज को 3–5 सेमी. से ज्यादा गहरा नही बोना चाहिए।

खाद की मात्रा

धान में खाद की प्रचुर मात्रा न होने पर इसका उत्पादन प्रभावित होता है इसलिए धान में खाद का छिडकाव अत्यंत आवश्यक है। इसके लिए खेत में पंच्यगव्य ,अजोला,जीवामृत का छिडकाव करने से खाद की आपूर्ति की जा सकती है। खाद बनाने की विधि पीछे के प्रष्ठो में वर्णित की गई है।

खरपतवार नियंत्रण

खरीफ मौसम की फसलो में मुख्य समस्या खरपतवारो की होती है, जो कि मुख्य फसल को बढने नहीं देते है। साथ ही फसल–खरपतवार प्रतिस्पर्धा के चलते पैदावार में भी कमी आती है इसलिए खरपरवार नियंत्रण करना अत्यन्त आवश्यक होता है। खरपतवार नियंत्रण के लिए बुवाई के 20–25 दिनों बाद निराई गुड़ाई करनी चाहिए। इसी तरह दूसरी बार खरपतवारो को बुवाई के 50–55 दिनों के बाद खेतो से निकालना चाहिए।

कीट व रोग

धान में कई प्रजाति के कीट व रोग लगते है। मुख्यतया लगने वाले रोग व कीट निम्न है–

गंधी बग

इस कीट के शिशु एवं वयस्क दोनों ही पौधे की कोमल पत्तियों व तनो का रस चूस के पौधे को कमजोर बना देते है।

तना छेदक

यह कीट तने को अन्दर से खाता है जिससे तना सूख जाता है।

ब्लास्टरोग

ब्लास्ट रोग : पत्तियो पर गोल आकर के धब्बे बन जाते है , गांठे सड़ कर काली हो जाती है।

जीवाणु अंगमारी रोग

जीवाणु अंगमारी रोगः पत्तियो व तनों पर अंडाकार धब्बे बन जाते है।

फसल में रोग एवं कीटो के बचाव हेतु जैविक पद्धति से उपचार विधि पीछे के प्रष्ठो पर बताई गई विधि से समय समय पर करना चाहिए।

रोपाई वाले धान में सिचाई का जल स्तर – नर्सरी से पौध रोपाई के समय खेत में 1.5 सेमी. जल का स्तर बनाये रखे। तत्पश्चात इसे धीरे धीरे 5 सेमी. तक बढ़ाते हुए फुटान व दाने भरने की अवस्था तक बनाये रखे। धान पकने के 15 दिन पहले से खेत में पानी देना बंद कर देवे।

तापमान का स्तर–धान की अच्छी पैदावार के लिए फूल एवं निषेचन अवस्था पर वातावरण का औसत तापमान 16–20^{0}C आवश्यक है जबकि दाने भरने व पकने की अवस्था पर 18–32^{0}C का औसत तापमान आदर्श तापमान माना जाता है। दाने भरने की अवस्था में 35^{0}C से अधिक का औसत तापमान कम उत्पादन का कारण बनता है।

उपज

धान की फसल की उचित देखरेख एवं रोग व कीटो से बचाव कर औसत उपज 20–25 क्विंटल/हेक्टेयर तक सीधी वुबाई से जबकि 30–40 क्विंटल / हेक्टेयर रोपाई वाले खेतो से प्राप्त की जा सकती है।

अरहर

अरहर की पारम्परिक किस्मे व उनकी विशेषताए

देशी सफ़ेद – अरहर की यह देशी सफ़ेद किस्म सफ़ेद दानो वाली है तथा ये 5–6 माह में पककर 12–13 क्विंटल/हेक्टेयर तक की उपज देती है।

देशी पीली – इस किस्म के दानो का रंग पीला होता है। इसके पौधे 150–180 सेमी. की ऊँचाई के होते है। अरहर की इस देशी किस्म के पौधे से 10–12 क्विंटल/हेक्टेयर तक की उपज प्राप्त होती है।

देशी लाल – इस किस्म के पौधे 160–180 सेमी. ऊँचाई वाले होते है। इसके दाने लाल रंग के गोलाई लिए होते है। यह किस्म 5–6 माह में पककर 10–12 क्विंटल/हेक्टेयर की उपज देती है।

खेत एवं उसकी तैयारी

अरहर की जड़े जमीन में बहुत अंदर तक जाती है अतः इसकी वुबाई हेतु गहरी व कम जल भराव वाली भूमि उपयुक्त मानी जाती है। ऐसी भूमि जहां जल भराव की समस्या अधिक होती है ऐसी भूमि पर अरहर की खेती करना थोडा मुश्किल होता है।

खेत की तैयारी करने के लिए एक जुताई मिट्टी पलटाऊ हल से करने के बाद 1 या 2 जुताई देशी हल से करनी चाहिए ताकि मिट्टी अच्छी भुरभुरी बन सके।

खाद की मात्रा

खेत को वुबाई हेतु तैयार करते समय ही खेत में गोबर की खाद 10–12 टन/हेक्टेयर की दर से साथ ही अंतिम जुताई के समय वर्मीकम्पोस्ट को 200–250 कि.ग्रा./हेक्टेयर की दर से डालना चाहिए। वर्मीकम्पोस्ट को खड़ी फसल में भी दिया जा सकता है।

बीज दर व बुवाई

साधारणतया अरहर की बुवाई मध्य जून से मध्य जुलाई के बीच करना सर्वोतम माना गया है क्योकि इस समय बुबाई करने से फसल की बढोतरी अच्छी होती है साथ ही रोग व कीटो का प्रकोप भी कम होता है।

अगर सिर्फ अरहर की फसल बोई जाये तो 12–15 किग्रा./हेक्टेयर बीज पर्याप्त होता है और अगर मिश्रित खेती की जाये तो 6–8 किग्रा./हेक्टेयर बीज पर्याप्त माना जाता है।

बुवाई करने हेतु बीजो को बुवाई से पूर्व बीजाम्रत या गौमूत्र से उपचारित करे। प्रयोग विधि पुस्तक के आगामी पृष्ठों पर है।

खरपतवार नियंत्रण

प्रारंभिक अवस्था से प्रति 20–25 दिन के अन्तराल पर हाथ से या बक्खर की सहायता से खरपतवार निकालते रहना चाहिए

रोग व कीट

अरहर की फसल के प्रमुख कीट निम्न है–

फलीछेदक – अरहर की फसल का यह एक मुख्य कीट है। जो कि सबसे ज्यादा नुकसान पहुचता है। यह फली के अन्दर घुस कर दाने को खा जाता है जिस से पैदावार को अत्यधिक नुकसान होता है

लाल लट – अरहर की प्रारंभिक अवस्था मै यह कीट फसल की कोमल पत्तियो को खा जाता है साथ ही इसके प्रकोप से फसल की बढवार ठीक से नहीं हो पाती है

रोग –

उकठा रोग

उकठा रोग – यह अरहर की फसल का एक प्रमुख रोग है इस रोग के प्रकोप के कारण खड़ी फसल सूखने लगती है।

फसल को रोगों एवं कीटो से बचाव के लिए बुवाई से पूर्व बीजोपचार करना आवश्यक है तथा फसल पर कीट एवं रोग दिखाई देने पर पुस्तक के पीछे प्रष्ठो पर दिए गए जैविक विधि से समय समय पर उपचार करे।

उपज – अरहर की फसल की औसत पैदावार 20–30 क्विंटल/हेक्टेयर तक होती है। अरहर की फसल 6–8 महीने तक की होती है।

अरहर की फसल में मिश्रित खेती प्रयोग – अरहर की फसल लम्बी अवधि की होती है। फसल की प्रारंभिक अवस्था में बढवार अत्यन्त धीमी होती है। अतः भूमि के अधिक उपयोग एवं अधिक आय प्राप्त हेतु अरहर के साथ ऐसी अन्तरा फसलो का उपयोग करना चाहिए जिनमे मुख्य फसल अरहर के साथ प्रतिस्पर्धा ना हो। इस हेतु अरहर से कम अवधि की मक्का, उड़द अथवा सोयाबीन इत्यादि का प्रयोग अंतः फसल के रूप में किया जाना चाहिए।

कपास

कपास की पारंपरिक किस्मे और उनकी विशेषताए–

कपी – देशी कपास की यह किस्म हरबेसियम प्रजाति की है। इस किस्म की पकने की अवधि 8–9 माह की होती है तथा इसकी जड़े गहराई तक जाती है। बरसात के आगमन के साथ ही इस किस्म की बुवाई की जाती है। इसके फूल 50–60 दिनों पर आना प्रारंभ हो जाते है। इस किस्म में 2 से 3 बार कपास के डोडो से चुनाई करने पर इसकी उपज प्राप्त होती है। इस किस्म में 6–8 क्विंटल/हेक्टेयर की उपज प्राप्त होती है। इस किस्म पर कीड़ो व बीमारियों का प्रकोप कम ही होता है।

जलवायु

कपास भारत की एक महत्वपूर्ण फसल है और अगर हम दक्षिणी राजस्थान की बात करे तो यहाँ पर कपास का महत्त्व और भी बढ़ जाता है। यहाँ पर अधिकतर स्थानों पर कपास की खेती वर्षा आधारित है। यद्यपि यहाँ पर जोत का आकार बाबजूद बहुत छोटा है यहाँ के किसानो का मिश्रित खेती के साथ यह आय का एक अच्छा स्रोत है।

कपास हेतु गर्म जलवायु की आवश्कता होती है। इस फसल की अच्छी बढवार हेतु 18–38^{0}C तापमान सर्वोत्तम माना जाता है फसल के लिए शुरुआत मै गर्म जलवायु की आवश्कता होती है।

मिट्टी

कपास बुवाई हेतु काली मिट्टी सर्वोत्तम मानी जाती है। ऐसी मिट्टी जिसका जल निकास सर्वोत्तम होता है वो बुवाई हेतु सबसे अच्छी मानी जाती है।

खेत की तैयारी व खाद की मात्रा

सर्वप्रथम एक जुताई मिट्टी पलट हल से करने के बाद दो जुताई देशी हल से करनी चाहिए ताकि मिट्टी भुरभुरी हो जाये। खेत की तैयारी के समय इसमें 8–10 टन/हेक्टेयर गोबर की खाद खेतो में अच्छी तरह फैलाकर देनी चाहिए। इसके अतिरिक्त किसान वर्मीकम्पोस्ट का उपयोग भी कर सकते है।

बीज उपचार व बीज की मात्रा

कपास के बीजो का उपचार गौ मूत्र से किया जा सकता है। उपचार हेतु 25 लीटर गौ मूत्र में कपास के बीजो को डूबो दिया जाता है तथा फिर इसे सुखा कर बुवाई की जाती है।

कपास खेती के लिए ज्यादा बीजो की आवश्कता नहीं होती है। कपास की साधारण किस्मो हेतु 8–10 किग्रा./हेक्टेयर की दर पर्याप्त मानी जाती है।

सिचाई की मात्रा

कपास की फसल शुरुआती स्तर पर पूरी तरीके से मानसून पर निर्भर करती है। कपास फसल की परंपरागत किस्मो की खेती अधिकतर वर्षा पोषित क्षेत्रों में की जाती है। सिंचाई हेतु जल की सुविधा होने पर 5–6 सिंचाईयाँ क्रांतिक अवस्थाओ पर की जानी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

कपास मानसून आधारित फसल होने के कारण इसमें बहुत अधिक संख्या में खरपतवार उगते है अतः समय समय पर उनकी निदाई करनी चाहिए। खरपतवार नियंत्रण हेतु वुबाई के 30–40 दिनों के बाद प्रथम निदाई व दूसरी निदाई फसल के 55–60 दिनों के अन्तराल पर करनी चाहिए। समय–समय पर निदाई–गुड़ाई करके फसल को खरपतवारो की प्रतिस्पर्धा से बचाना चाहिए।

खड़ी फसल में जैविक खाद देना

वुबाई के 60–75 दिन के बाद खड़ी फसल में गौ मूत्र 10 लीटर की दर से देना चाहिए या फिर पंचगव्य की 3 लीटर की मात्रा बुवाई के 60–75 दिन बाद डालनी चाहिए।

फसल संरक्षण –

रोग

कपास की फसल में सामान्यतयाः जड़ गलन रोग, जीवाणु अंगमारी रोग, अल्टरनेरिया पत्ती धब्बा रोग, पैराविल्ट अथवा सूखा रोग होता है। इसके फसल रोग प्रबंधन अथवा जैविक नियंत्रण हेतु पुस्तक के पीछे के प्रष्ठो पर

वर्णित जैविक विधि से बीजोपचार, रोगोपचार इत्यादि आवश्यक रूप से समय–समय पर करे। इसके अतिरिक्त फसल प्रबंधन हेतु गर्मियों में गहरी जुताई, उचित फसल चक्र इत्यादि कृषि गतिविधिया अपनाये। रोग जनित खेतो में 10 किग्रा. ट्रायकोडर्मा, 200 किग्रा. गोबर की खाद के साथ के साथ मिलकर प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में डाले।

कीट–

अमेरीकन कपास की फसल में सामान्यतया सफ़ेद मख्खी, हरा तेला, सूडी इत्यादि का प्रकोप होता है। इन कीटो के नियंत्रण हेतु फसल प्रबंधन एवं जैविक पद्धति से नीमास्त्र, ब्रमास्त्र इत्यादि पुस्तक के पीछे के प्रष्ठो में वर्णित विधि द्वारा बना का प्रयोग करे। जैव नियंत्रण हेतु 6 फेरो मेन ट्रेप का प्रयोग प्रति हेक्टेयर की दर से कर सकते है। क्राइसोपर्ला परजीवी के अंडे 50000 प्रति हेक्टेयर की दर से उपयोग कीट नियंत्रण में प्रभाव कारी है। देशी हरबेशियम कपास प्रजाति में यद्यपि कीटो का प्रकोप अपेक्षाकृत कम होता है।

कपास की फसल में अंत:फसल का प्रयोग–

कपास की फसल लम्बी अवधि एवं अधिक फैलाव होने के कारण कतार से कतार अधिक रखनी होती है। इस कारण से इनकी कतारों के मध्य शीघ्र पकने वाली फसले जैसे– मक्का, उड़द, सोयाबीन इत्यादि की बुवाई भी वर्षा आधारित की जा सकती है। कपास की 2 कतारों के मध्य मक्का की दो कतारे अथवा उड़द या सोयाबीन की 4 कतारों की बुवाई करके कपास के उत्पादन के अतिरिक्त अन्य फसलो से अधिक आय प्राप्त की जा सकती है।

उपज

कपास की औसत उपज 5–6 क्विंटल/हेक्टेयर तक होती है। जिन्हें 3–4 बार चुनाई (बीनकर) करके फसल से प्राप्त किया जा सकता है। कपास के पूरी तरह से खुले हुए डोडे जिसमे की कपास का रेशा पूरा पका हो फसल से बीनना चाहिए। नमी युक्त या कच्चे रेशे बिनाई करने के कारण कपास की गुणवत्ता कमजोर होती है तथा उपज में गांठे या नमी होने के कारण बाजार मूल्य में कमी आती है।

सोयाबीन

सोयाबीन भारत की तिलहनी फसलो में सबसे महत्त्वपूर्ण फसल है। सोयाबीन के तेल का खाद्य उपयोग भारत में सबसे ज्यादा किया जाता है तेल के अतिरिक्त इसका प्रयोग खली व प्रोटीन आधारित उत्पाद के रूप में भी किया जाता है। यद्यपि यह फसल परम्परागत फसल की श्रेणी में नहीं है, अपितु क्षेत्र के जनजातीय कृषको के खेतो पर एकल अथवा मिश्रित फसल रूप में उपलब्ध बीज से इस नकदी फसल की खेती जैविक विधि से की जा रही है।

मिट्टी

सोयाबीन की फसल बुवाई के लिए उचित जल निकास वाली हल्की रेतीली दोमट या बलुई दोमट मृदा सर्वोत्तम मानी जाती है।

जलवायु

सोयाबीन गर्म व नम जलवायु की फसल है, इसके अंकुरण के लिए 20–32^0 C तापमान की आवश्यकता होती है। फसल की अच्छी बढ़वार के लिए 30^0 C तापमान उपयुक्त माना जाता है। दाना बनते समय अधिक तापमान होने पर इसके तेल की प्रतिशत मात्रा बढ जाती है।

खेत की तैयारी व खाद की मात्रा

खेत की तैयारी हेतु एक जुताई मिट्टी पलट हल से करने के बाद दो जुताई देशी हल से करते है। इसी बीच इसमें 10–15 टन/हेक्टेयर की दर से गोबर की खाद डालते है।

बीज की मात्रा व फसल अंतरण

सोयाबीन की फसल मानसून अथवा सिंचाई के स्रोतों की उपलब्धता पर निर्भर करती है। मानसून की वर्षा के आगमन के साथ ही किसानो को बुवाई कर देनी चाहिए। भारत के इस जनजातीय क्षेत्र में मानसून की वर्षा मध्य जून से प्रारंभ होती है।

सोयाबीन की एकल फसल वुबाई हेतु 70–80 किग्रा./हेक्टेयर बीज की आवश्यकता होती है। बुवाई हेतु स्वस्थ एवं एक समान दाने वाले बीजो का उपयोग करना चाहिए। बुवाई हेतु कतार से कतार की दूरी 30 सेमी. व पौधे से पौधे की दूरी 8 सेमी. रखनी चाहिए। विलम्ब से बुवाई करने पर उपज में कमी आने की संभावना होती है। सोयाबीन की बुवाई के 15–20 दिन पश्चात पौधों की उचित संख्या करने हेतु अतिरिक्त पौधों को निकाल कर पौधे से पौधे की दूरी 10–15 सेमी. कर देनी चहिये।

सोयाबीन फसल के साथ में क्षेत्र में उगाई जाने वाली पारंपरिक फसल मक्का को अंतः फसल के रूप में करने हेतु सोयाबीन व मक्का की बुवाई 4:2 अनुपात में करे एवं कतारों से कतारों की दूरी 30–30 सेमी. पर रखे।

खरपतवार नियंत्रण

सोयाबीन फसल में खरपतवारों से बहुत अधिक नुकसान होता है। ऐसा देखा गया है कि यदि खरपतवारो को समय पर नियंत्रित ना किया जाए तो फसल में 50 प्रतिशत तक की उपज हानि होती है। सोयाबीन की फसल में खरपतवार नियंत्रित करने के लिए पहली निदाई वुबाई के 20–25 दिनों के बाद व दूसरी निदाई वुबाई के 40–45 दिनों के बाद करनी चाहिए।

सिचाई

सोयाबीन की फसल को मानसूनी वर्षा के चलते सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। वर्षा जल की अनउपलब्धता की स्थिति में फूल आने व फलियों में दाना बनने की अवस्था पर उपलब्ध साधनों से सिंचाई की जानी चाहिए।

रोग एवं कीट

पीला मोजेक

पीला मोजेक– यह रोग सोयाबीन की फसल का प्रमुख रोग है इस रोग के प्रकोप के कारण पत्तिया पीली पड जाती है यह रोग सफ़ेद मक्खी के कारण होता है।

सफ़ेद मक्खी

सफ़ेद मक्खी – सोयाबीन का यह एक प्रमुख कीट है। यह सोयाबीन की पतियों का रस चूस कर उन्हें नुकसान पहुचता है।

सोयाबीन फसल में रोगों तथा कीटो से सुरक्षा हेतु पुस्तक के पीछे के प्रष्ठो पर वर्णित जैविक विधियों से बीजोपचार, रोगोपचार एवं कीटोपचार करना चाहिए।

कटाई व उपज

सोयाबीन की फसल 90–120 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। जब फसल की फली सूख जाए तथा हल्की सी चटकने लगे तो यह फसल पकने का संकेत है। इसी समय इसकी कटाई करनी शुरू कर देनी चाहिए।

उचित फसल प्रबंधन कर सोयाबीन की उपज 20–25 क्विंटल/हेक्टेयर तक प्राप्त हो सकती है।

मूंगफली

मूंगफली का दैनिक आहार, पशु आहार, खेतो की उर्वरा शक्ति बढाने में एवं कीटनाशक के रूप में एक अलग ही महत्त्व है। पोषणकारी होने से परंपरागत रूप से क्षेत्र में खेती की जाती है।

मिट्टी

मूंगफली खेती हेतु उचित जल निकास वाली हल्की बलुई दोमट या रेतीली दोमट मृदा सर्वोत्तम मानी जाती है। इस फसल के लिए लाल मिट्टी ज्यादा अच्छी नहीं मानी जाती है साथ ही ऐसी मृदा जिसमें जल निकास अच्छा ना हो वहा पर इस फसल की बुवाई नहीं चाहिए, क्योकि उन खेतो में इस फसल की फलिया एवं दाने पूरे भराव वाले नहीं बन पाते है।

जलवायु

मूंगफली की फसल हेतु गर्म जलवायु की आवश्यकता होती है। इसकी बुवाई के समय वातावरण में अधिक तापमान की आवश्कता होती है, जबकि कटाई के समय कम तापमान की आवश्कता होती है। इस फसल के पौधों की उचित वृद्धि हेतु 25–30^{0}C तक औसत तापमान की आवश्यकता होती है। इस फसल में ज्यादा ठण्डी जलवायु नुकसान दायक एवं कम उपज का कारण बनती है।

खेत की तैयारी व खाद की मात्रा

मई के शुरुआत में मिट्टी पलट हल से एक जुताई करने के बाद कुछ समय खेत को खुला छोड़ देना चाहिये। साथ ही जून के अंत मै दो जुताई देशी हल से करनी चाहिए ताकि मिट्टी अच्छी तरह से भुरभुरी हो जाये। खेत की तैयारी के दौरान इसमें 6–12 टन/हेक्टेयर गोबर की अच्छी सड़ी खाद अच्छी तरह बिखेर कर डालनी चाहिए।

वुबाई का समय व बीज की मात्रा

मूंगफली की वुबाई का सर्वोत्तम समय मध्य जून से मध्य जुलाई तक का होता है। उपयुक्त समय पर फसल की वुबाई करनी चाहिए। बुवाई हेतु स्वस्थ बीजो की मात्रा 100–150 किग्रा./हेक्टेयर की दर से पर्याप्त होती है। क्षेत्र में बुवाई परंपरागत रूप से अपने घर में संरक्षित बीज से प्रायः की जाती है।

वुबाई से पूर्व फसल का बीजोपचार करना फसल को रोगों एवं कीटो से बचाव हेतु आवश्यक होता है।

फसल अंतरण

मूंगफली की फसल के लिए पंक्ति से पंक्ति की दुरी 20–30 सेमी. व पौधे से पौधे की दुरी 10 सेमी. रखनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

मूंगफली की फसल में खरपतवार बहुत अधिक नुकसान पहुचाते है। उचित खरपतवार प्रबंधन के अभाव में 30–50 प्रतिशत तक उपज में नुकसान होता है। खरपतवार नियंत्रण हेतु कम से कम दो निदाईयों की आवश्कता होती है। पहली निदाई वुबाई के 20–25 दिनों के बाद और दूसरी निदाई वुबाई के 40–50 दिनों के बाद करनी चाहिए।

मिश्रित फसल प्रयोग

मूंगफली के साथ मिश्रित फसल भी आसानी से ली जा सकती है –

(1) इसमें 3 पंक्ति मूंगफली की व 1 पंक्ति अरहर की बुवाई कर सकते है।

(2) 1 पंक्ति सोयाबीन की व 1 पंक्ति मूंगफली की बुवाई कर भी अधिक उपज प्राप्त की जा सकती है।

रोग

मूंगफली का टिक्का रोग–

यह मूंगफली का एक प्रमुख रोग है। इस रोग में फसल पर गोल आकर के मटमेले अथवा गहरे भूरे रंग के धब्बे बन जाते है। सर्वप्रथम रोग के लक्षण पत्तियों की ऊपरी सतह पर हल्के धब्बे के रूप में दिखाई देते है। यह रोग फसल

मूंगफली का गेरुआ रोग–

सर्वप्रथम रोग के लक्षण पत्तियों की निचली सतह पर दिखाई देते है। रोग का प्रकोप अधिक होने पर पत्तिया झुलस का गिर जाती है। इस रोग में फसल के पत्ते पीले पड़ जाते है।

कीट

वेलवेटबियन केटरपिलर–

इस कीट का केटरपिलर फसल की पत्तियों को खा कर बहुत अधिक नुकसान पहुंचाता है।

थ्रिप्स–

यह कीट पत्तियों का रस चूसता है। कीट नियंत्रण की विधि पुस्तक के पीछे दी गई है।

कटाई व उपज–

मूंगफली फसल की पत्तिया पिली पड़ना फसल के पकाव का संकेत है। खेत में नमी होने पर फसल में हल चला कर पौधों को उखाड़ लेवे तथा ढेर रूप में सुखा देवे।

ये फसल लगभग 120–140 दिन मै पककर तैयार हो जाती है तथा इसकी उपज 20–25 क्विंटल/हैक्टेयर तक प्राप्त हो जाती है।

उड़द

उड़द की परंपरागत किस्मे एवं उनकी विशेषताएं

खूटडिया– इस किस्म के पौधे सीधे होते है तथा 50–60 सेमी. तक ऊंचाई लिए होते है। यह किस्म 80–90 दिनों में पककर 6–7 क्विंटल/हेक्टेयर तक उपज देती है।

वेलडिया–इस किस्म के पौधों की आकृति बेलाकर होती है। तथा ये खेत में बिछे रहते है। यह किस्म 80–90 दिनों में पककर तैयार हो जाती है तथा 6–7 क्विंटल/हेक्टेयर तक उपज देती है।

खेत एवं उसकी तैयारी

उड़द की फसल को सभी प्रकार की मिट्टी में उगाया जा सकता है परन्तु इस फसल के लिए काली मिट्टी व दोमट मिट्टी सर्वोत्तम मानी जाती है। फसल वृद्धि हेतु उचित जल निकास वाली मिट्टी सर्वोत्तम मानी जाती है।

सर्वप्रथम एक जुताई मिट्टी पलट हल से करने के बाद दो से तीन जुताई देशी हल से कर के मिट्टी को भुरभुरी बना लेते है।

खाद की मात्रा

दलहनी फसल होने के कारण इस फसल को नत्रजन की बहुत अधिक मात्रा की आवश्यकता नहीं होती है, फिर भी खेत की तैयारी के समय 5–10 टन/हेक्टेयर गोबर की खाद और 200–250 किग्रा/हेक्टेयर की दर से वर्मीकम्पोस्ट डाल कर खेत की उर्वरा शक्ति को बनाये रखना चाहिए।

बीज दर व बुवाई

उड़द की बुवाई जून–जुलाई में की जाती है। मध्य जून से मध्य जुलाई इस फसल की बुवाई के लिए सर्वोत्तम मानी जाती है। उड़द के लिए 12–15 किग्रा/हेक्टेयर की दर से बीज पर्याप्त माना जाता है। बुवाई से पूर्व बीजो को रायजोबियम कल्चर से उपचारित कर बुवाई करनी चाहिए। इस हेतु 600 ग्राम कल्चर प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग किया जाता है। इस उपचार से फसल की जड़ो में अधिक गांठे बनती है जो वातावरण की नत्रजन का स्थिरीकरण कर पौधों की नत्रजन पूर्ति में सहायक होता है।

खरपतवार नियंत्रण

इस फसल में दो से तीन निदाई की आवश्यकता पड़ती है पहली निदाई 20–25 दिन में व दूसरी 40–45 दिन में करनी चाहिए।

सिंचाई

सामान्यतया इस फसल में सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। परन्तु यदि वर्षा सही समय पर ना हो तो सिंचाई की आवश्यकता पड़ सकती है। किसान भाई ध्यान रखे कि खेत में वर्षा जल एकत्रित ना हो पाये यदि खेत में वर्षा जल एकत्रित होता है तो जलनिकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। वर्षा जल के अभाव में इस फसल में मुख्तया तीन सिंचाईयों की आवश्यकता होती है। पहली सिंचाई फूल आते समय, दूसरी सिंचाई फली बनते समय व तीसरी सिंचाई दाना बनते समय करनी चाहिए।

रोग व कीट

सफ़ेद मक्खी–यह एक रस चूसने बाला कीट है और यह कीट पीतशिरा मोजेक नामक रोग को फेलाने में भी सहायक होता है इसकी उपस्थिति से फसल को बहुत अधिक नुकसान होता है।

फली छेदक – यह कीट काटने व चबाने वाले होते है यह फली में छेद कर के दाना खा जाता है। इस कीट से फसल को बहुत अधिक नुकसान होता है।

पीतशिरा मोजेक

यह रोग एक वायरस जनित रोग है जो सफ़ेद मक्खी से फैलता है इस रोग के कारण सबसे पहले पत्तियों पर गोलाकार धब्बे बन जाते है बाद में पूरी की पूरी पत्तिया पीली पड़ जाती है और अंत मै पौधा मुरझाकर सूख जाता है।

उपज

उड़द को फलियों को 2–3 बार में तोड़ कर अच्छी तरह से सुखा कर इसकी थ्रेसिंग की जाती है। फसलानुकुल वातावरण एवं उचित फसल प्रबंधन होने पर मूंगफली की उपज 12–15 क्विंटल / हेक्टेयर तक प्राप्त हो जाती है।

गेहूं

भारत मै चावल के बाद सबसे ज्यादा भोजन उपयोग में लिया जाने वाला अनाज गेहू है। रबी में सिंचाई की सुविधा होने पर इसकी खेती जनजातीय क्षेत्र में अधिकतर स्थानों पर प्राथमिकता से की जाती है। सामान्यतया गेहू के पकने के लिए 5–6 सिंचाई की आवश्यकता होती है। किन्तु पानी की कमी वाले कुछ स्थानों पर कम पानी में पकने वाली पारंपरिक किस्मो की खेती भी किसानो के द्वारा संरक्षित बीजो द्वारा की जा रही है।

गेहू की पारंपरिक किस्मे एवं उनकी विशेषताए

वाजिया– सिमित सिंचाई में पकने वाली गेहू की इस किस्म को संरक्षित नमी में अक्टुबर माह में वुबाई करके 15–18 क्विंटल/हेक्टेयर की उपज प्राप्त होती है। यह किस्म 90–100 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। इसके पौधे पूरी ऊंचाई लिए होते है।

कल्याण– मध्यम ऊंचाई वाली यह किस्म 3–4 पानी में पककर तैयार होती है। अक्टुबर–नबंबर माह में वुबाई के उपरांत यह किस्म 100–110 दिनों में पककर 18–20 क्विंटल/हेक्टेयर की उपज देती है।

टुकड़ी– किसानो के स्वयं के द्वारा संरक्षित गेहू की यह किस्म 3–4 सिंचाईयों में पककर 18–20 क्विंटल/हेक्टेयर की उपज देती है। अधिक उपज प्राप्त करने हेतु खरीफ में खेतो को खाली होने के बाद संरक्षित नमी में वुबाई करनी चाहिए साथ ही उचित समय पर वुबाई करनी चाहिए अगर वुबाई देरी से होती है तो उपज में कमी आती है।

जलवायु

गेहू की फसल के लिए सूखी व ठंडी जलवायु की आवश्कता होती है इसकी बुवाई हेतु 20 –22^0 C तापमान की आवश्यकता होती है साथ ही इसके लिए कटाई के समय गर्म जलवायु की आवश्यकता होती है

मिट्टी

गेहू की फसल के लिए उचित जल निकास वाली दोमट व मध्यम काली मिट्टी सर्वोत्तम मानी जाती है परन्तु इसकी खेती रेतीली दोमट व काली मिट्टी में भी की जा सकती है। इस फसल हेतु जलभराव वाली भूमि उपयुक्त नहीं मानी जाती है।

खेत की तैयारी व खाद की मात्रा

गेहू के खेत की तैयारी के लिए एक जुताई मिट्टी पलट हल से करने के बाद दो जुताई देशी हल से कर के मिट्टी को भुरभुरी बना लेते है साथ ही इसी समय पर 10–12 टन/हेक्टेयर की दर से गोबर की खाद अच्छी तरह से बिखेर कर देते है। जैविक विधि से खेती हेतु जैविक उर्वरक व पौध वृद्धी हेतु छिडकाव फुटान एवं फूल आने की अवस्था पर पीछे के प्रष्ठो पर दी गई विधि से अवश्य करे।

बुवाई का समय व बीज की मात्रा

गेहू की बुवाई के लिए नवम्बर माह सर्वोत्तम माना जाता है क्योकि इस समय पर अंकुरण हेतु उचित तापमान होता है। बिना सिचाई के गेहू बुवाई हेतु अक्टूबर का दूसरा पखवाडा व नवम्बर का प्रथम पखवाडा अच्छा माना जाता है।

क्षेत्र में खाली पड़े खेतो में सिंचाई की उपलब्धता होने पर दिसम्बर में भी वुबाई की जा सकती है किन्तु इससे उपज में 10–20 प्रतिशत तक की कमी प्राप्त होती है।

बीज की मात्रा सिचाई पर निर्भर करती है अगर पर्याप्त पानी उपलब्ध है तो 100–125 किग्रा./हेक्टेयर की दर से बुवाई की जाती है साथ ही अगर सिचाई के लिए पानी उपलब्ध नहीं है तो 60–90 किग्रा./हेक्टेयर बीज पर्याप्त होता है। गेहू की फसल में कतार से कतार की दुरी 22–23 सेमी. और बुवाई 5 सेमी. गहराई पर करनी चाहिए।

सिंचाई

गेहू की फसल के लिए सिंचाई अत्यंत आवश्यक होती है इसके लिए सामान्यतया 6 सिंचाईयों की आवश्कता होती है जो की हर 20–25 दिन मै की जानी चाहिए। फिर भी अगर 2 या 3 सिचाई के लिए पानी उपलब्ध है तब भी इसका उत्पादन अच्छा लिया जा सकता है। सिंचाई हेतु निम्न क्रांतिक अवस्थाओ पर पानी की उपलब्धता को देखते हुए करनी चाहिए।

पानी की उपलब्धता के आधार पर क्रांतिक अवस्थाओ पर गेहूं की सिंचाई–

फसल की क्रांतिक अवस्थाए	बुवाई के बाद के दिन	6 सिंचाई की उपलब्धता पर	4 सिंचाई की उपलब्धता पर	2 सिंचाई की उपलब्धता पर	1 सिंचाई की उपलब्धता पर
शीर्ष जड़ बनने की अवस्था	18–21	पहली सिंचाई	पहली सिंचाई	पहली सिंचाई	पहली सिंचाई
कल्ले फूटने की अवस्था	35–40	दूसरी सिंचाई	दूसरी सिंचाई	–	–
गांठ बनने की अवस्था	50–55	तीसरी सिंचाई	–	–	–
बालियों के आने की अवस्था	65–70	चौथी सिंचाई	तीसरी सिंचाई	-–	–
दूधिया अवस्था	80–85	पाचवीं सिंचाई	चौथी सिंचाई	दूसरी सिंचाई	–
दाना पकने की अवस्था	90–95	छठवी सिंचाई	–	–	–

खरपतवार नियंत्रण

गेहू की फसल में गेहू का मामा नामक खरपतवार सबसे अधिक नुकसान पहुंचाता है। इसे नियंत्रित करने के लिए बुवाई के 30–35 दिन बाद निराई गुड़ाई करनी चाहिए साथ ही दूसरी निराई गुड़ाई आवश्यकता होने पर बुवाई के 70–75 दिन बाद करनी चाहिए। इससे खरपतवार को पूरी तरीके से नियंत्रित किया जा सकता है।

रोग प्रबंधन

रोली रोग (Rust)– यह रोग फसल के तनों व पत्तियो पर होता है यह मुख्यतः तीन प्रकार का होता है इसके कारण फसलो पर जंग (लोहे पर लगने बाले) के रंग के निशान पड़ जाते है

(गेहूं के Rust रोग के लक्षण)

तना रोली (Stem Rust)

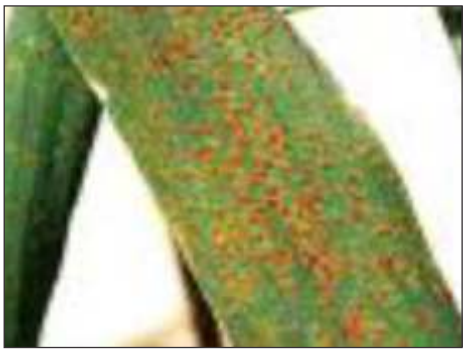

भूरी रोली(Brown rust)

पीली रोली (Yellow rust)

रोकथाम– इस रोग की रोकथाम के लिए रोग प्रतिरोधी किस्मो को लगाना चाहिए साथ ही उपयुक्त फसल चक्र अपनाना अत्यंत आवश्यक है इस हेतु मिश्रित खेती भी एक अच्छा विकल्प है। इसके अतिरिक्त पौधों पर 5 लीटर छाछ (इनजजमतउपसा)/200लीटर पानी में मिला के प्रति हक्टेयर की दर से छिडकाव करना चाहिए।

कंडुआ रोग (Loose smut)– इस रोग के प्रकोप के कारण गेहू की बाली मै दाने पूरी तरह से राख जेसे हो जाते है।

रोकथाम – इस रोग की रोकथाम के लिए बीजोपचार अत्यंत आवश्यक होता है। जैविक विधि से बीजोपचार की विधि पुस्तक के पिछले पृष्ठों पर दी गई है। रोगग्रस्त पौधों को जड़ से उखाड़ कर खेत से बाहर कर जला देना चाहिए जिससे रोग अन्य पौधों में ना फैले।

पत्ती धब्बा रोग (Powdery Mildew):-

इस रोग के प्रकोप के कारण पोधे के सभी भागो पर सफ़ेद रंग का पाउडर फैला रहता है।

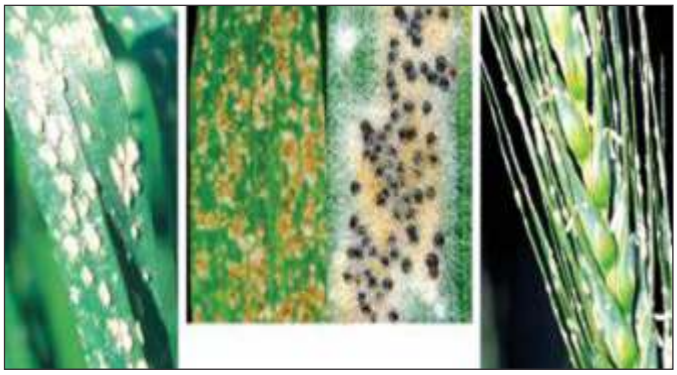

रोकथाम – इस रोग की रोकथाम के लिए गौमूत्र का छिडकाव करना उचित होता है।

करनाल बंट (Karnal Bunt) :– इस रोग के कारण दाने काले पड़ जाते है जिस से उत्पादन में भारी कमी देखी जाती है।

रोकथाम– इस रोग की रोकथाम के लिए रोग प्रतिरोधी किस्मो की वुबाई करनी चाहिए। साथ ही खेत मै जरुरत से ज्यादा पानी नहीं भरे इसका ध्यान भी रखना चाहिए।

कीट प्रबंधन –

दीमक– यह पौधों की जड़ो पर आक्रमण कर के फसल को बहुत अधिक नुकसान पहुचाते है। दीमक जहां भी होती है पूरी कालोनी समूह में होती है तथा इनकी बहुत अधिक संख्या होती है।

रोकथाम– इसकी रोकथाम के लिए गर्मी मे खेत की गहरी जुताई कर के खेत को खुला छोड़ देना चाहिए। साथ ही गोबर की अच्छी सड़ी हुई खाद का ही प्रयोग करना चाहिए, क्योकि यदि गोबर की खाद सड़ी न हो तो दीमक का प्रकोप अधिक हो सकता है। इसके अतिरिक्त नीम की पत्तियों की खाद 5 क्विंटल/हेक्टेयर व नीम के बीज की खाद 1 क्विंटल/हक्टेयर की दर से उपयोग करना चाहिये।

एफिड– इसके प्रोढ तथा निम्फ दोनों ही इसकी स्पाईकालेट व कोमल पत्तियो का रस चूस कर उपज व गुणवत्ता को प्रभावित करते है।

रोकथाम– इसकी रोकथाम के लिए अदरक व मिर्ची का घोल, गाय का मूत्र, दशपर्णी या छाछ का प्रयोग भी कर सकते है।

कटाई व उपज

नवम्बर मे बोई गई फसल मार्च के अंत में कटाई के लिए तैयार हो जाती है। जब गेहूं के दाने का रंग सुनहरा हो जाता तब गेहू कटाई के लिए तैयार हो जाने का सूचक है। फसल की पूर्ण देखरेख व सिंचाई देकर लगभग 25–30 क्विंटल/हेक्टेयर तक उपज प्राप्त की जा सकती है।

चना

चने की पारंपरिक किस्मे–

देशी चना – चने की इस देशी किस्म का दाना छोटा और पीला होता है। इसके 100 दानो का वजन लगभग 14–15 ग्राम होता है। इसमें प्रति फली 1–2 दाने प्राप्त होते है। ये किस्म एक सिंचाई या बिना सिंचाई के संरक्षित नमी में लगभग 80–90 दिनों में पककर 12–15 क्विंटल/हेक्टेयर की उपज देती है।

मिट्टी

चने की फसल के लिए उचित जल निकास वाली मध्यम काली मृदा, दोमट, व बलुई दोमट मृदा सर्वोत्तम मानी जाती है। साथ ही ऐसी भूमि जहा पर पहले धान की खेती की गई हो व उचित नमी हो ऐसी भूमि में चने की खेती आसानी से की जा सकती है जल भराव वाली मृदा इस की खेती के लिए उचित नहीं मानी जाती है

जलवायु

भारत में चने का अपना एक महत्त्व है तथा जिन क्षेत्रों में पानी की समस्या है वहां इसका महत्त्व और भी बढ जाता है। चने की फसल कम पानी की फसल है और किसान इसे आसानी से संरक्षित नमी में उगा सकते है।

चने की फसल ठंडी जलवायु की फसल है इस फसल के लिए पाला अत्याधिक नुकसान पहुचता है। यद्यपि इस जनजातीय क्षेत्र में पाला पड़ने की संभावना काफी कम होती है। फूल आते समय या दाना बनते समय बरसात होने पर इसकी उपज ज्यादा नहीं हो पाती है।

खेत की तैयारी व खाद की मात्रा

अक्टूबर के प्रथम पखवाड़े में मिट्टी पलट हल से एक जुताई करने के बाद एक या दो जुताई देशी हल से कर के मिट्टी को भुरभुरा बना लेते है। इसी समय पर इसमें 8–10 टन/हेक्टेयर की दर से गोबर की खाद देते है और अगर बिना सिचाई के ही सीधे चने की बुवाई करनी हो तो मिट्टी पलट हल से जुताई ना कर के देशी हल से एक जुताई के बाद बुवाई कर दी जाती है।

बुवाई का समय व बीज की मात्रा

चने की बुवाई हेतु मध्य अक्टूबर से मध्य नवम्बर का समय सबसे अच्छा होता है।

बीज को बुवाई से पहले बीजम्रत से बीजो को उपचारित करना चाहिए जिससे फसल को रोगों से बचाया जा सके।

यदि बिना सिचाई के चने की बुवाई करनी हो तो 60–70 किग्रा./हेक्टेयर बीज पर्याप्त होता है और यदि सिचाई कर के चने की बुवाई करनी हो तो 80–90 किग्रा./हेक्टेयर बीज की आवश्यकता होती है।

फसल अंतरण

चने की फसल में कतार से कतार की दुरी 30 सेमी. व पोधे से पोधे की दुरी 10 सेमी. रखनी चाहिए साथ ही इसकी 5–8 सेमी की गहराई पर बुवाई करनी चाहिए।

सिंचाई

चने की फसल को अत्यधिक पानी देने पर फसल वृद्धि एवं उपज पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। अतः हल्की सिंचाई का अनुमोदन किया जाता है।

दो सिंचाई उपलब्ध होने पर पहली बुवाई के 30 दृ 35 दिन व दूसरी सिंचाई बुवाई के 60 – 65 दिन बाद करनी चाहिए।

एक सिचाई उपलब्ध होने पर बुवाई के 30–35 दिन बाद करनी चाहिए।

ऊपरी शाखाओ को तोडना

बुवाई के 30–40 दिन बाद चने की ऊपरी शाखाओ को तोड़ देना चाहिए। इससे चने की और ज्यादा शाखाये निकलती है जिस से इसकी उपज मे बढ़ोतरी होती है।

खरपतवार नियंत्रण

चने की फसल मै खरपतवार नियंत्रण आवश्यक है इस के लिए बुवाई के 20 दिन व 40 दिन के अन्तराल पर दो बार खरपतवार निकालने चाहिए।

रोग प्रबंधन

उकठा–

यह चने की फसल का एक प्रमुख रोग है इसके कारण फसल को अत्यधिक नुकसान होता है। इस रोग की शुरुआत में पहले धीरे धीरे पौधों की जड़े सूखने लगती है जिसके कारण पौधों की पत्तिया पीली पड़ जाती है और अंत मे पूरा पौधा सूख के मर जाता है।

रोकथाम –

रोग की रोकथाम के लिए गर्मीयों में गहरी जुताई कर के खेत को खाली छोड़ देना चाहिए। इस रोग से बचाव हेतु फसल चक्र को अपनाना चाहिए। बीमारी रहित बीजो की बुवाई करनी चाहिए। बुवाई के समय अरंडी की खली 500 किग्रा./हेक्टेयर की दर से डालनी चाहिए। ट्राईकोडर्मा 4 ग्राम/किग्रा. की दर से बीज को उपचारित कर के बुवाई करनी चाहिए।

पत्ती धब्बा रोग (Ascochyta blight)

इस रोग के प्रकोप के कारण पौधों की फली, पत्तियों व तनो पर धब्बे बन जाते है।

रोकथाम –

रोग प्रतिरोधक किस्मो का चयन करना चाहिए। इस रोग की रोकथाम के लिए गौ–मूत्र का स्प्रे सर्वोत्तम माना जाता है इसके लिए 1:20 के अनुपात में पानी में मिला कर छिडकाव करे।

कीट प्रबंधन–

फली छेदक– यह चने की फसल का एक प्रमुख कीट है इसके प्रकोप से फसल में 20–30 प्रतिशत तक का नुकसान देखा गया है। यह कीट फली में छेद कर के दाना खा जाती है।

इस कीट की रोकथाम के लिए दशपर्णी दवा के 2 से 3 छिडकाव से फली छेदक कीट के प्रकोप को रोका जा सकता है।

कटाई व उपज

चने की फसल की कटाई मार्च के दुसरे सप्ताह से प्रारंभ हो जाती है। जब चने की पत्तिया सूख कर गिरने लगती है तब इसकी कटाई प्रारंभ कर देनी चाहिए। फसल को ज्यादा सूखने देने पर फलीयों का झड़ना प्रारंभ हो जाता है जिससे उपज में कमी हो सकती है।

फसलानुकुल वातावरण एवं उचित फसल प्रबंधन होने पर उपज 18–20 क्विंटल/हेक्टेयर तक प्राप्त हो जाती है।

जायद मूंग

इस जनजातीय क्षेत्र में वर्ष में खरीफ, रबी फसल के बाद तीसरी जायद फसल के रूप में जायद मूंग की खेती परंपरागत रूप से की जा रही है। सिमित दिनों में पकाव अवधि वाली (65–75 दिन) उपलब्ध देशी एवं उन्नत मूंग बीजो से यह खेती दलहन की पैदावार, मिट्टी की पोषकता एवं पशुओ के चारे का एक अच्छा अवसर प्रदान करती है। क्षेत्र में उपलब्ध नदी, नालों, तालाबों इत्यादि से प्राप्त सिंचाई जल का उपयोग इसकी खेती हेतु करते है।

खेत एवं उसकी तैयारी

मूंग की फसल को सभी प्रकार की मिट्टी में उगाया जा सकता है परन्तु इस फसल के लिए काली मिट्टी व दोमट मिट्टी सर्वोत्तम मानी जाती है। फसल वृद्धि हेतु उचित जल निकास वाली मिट्टी सर्वोत्तम मानी जाती है। सर्वप्रथम एक जुताई मिट्टी पलट हल से करने के बाद दो से तीन जुताई देशी हल से कर के मिट्टी को भुरभुरी बना लेते है।

खाद की मात्रा

दलहनी फसल होने के कारण इस फसल को नत्रजन की बहुत अधिक मात्रा की आवश्यकता नहीं होती है, फिर भी खेत की तैयारी के समय 5–10 टन/हेक्टेयर गोबर की खाद और 200–250 किग्रा/हेक्टेयर की दर से वर्मीकम्पोस्ट डाल कर खेत की उर्वरा शक्ति को बनाये रखना चाहिए।

बीज दर व बुवाई

मूंग की बुवाई फरवरी– मार्च माह में की जाती है। जायदमूंग की बुवाई हेतु 12–15 किग्रा/हेक्टेयर की दर से बीज पर्याप्त माना जाता है। बुवाई से पूर्व बीजो को रायजोबियम कल्चर से उपचारित कर बुवाई करनी चाहिए। इस हेतु 600 ग्राम कल्चर प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग किया जाता है। इस उपचार से फसल की जड़ो में अधिक गांठे बनती है जो वातावरण की नत्रजन का स्थिरीकरण कर पौधों की नत्रजन आपूर्ति में सहायक होती है।

खरपतवार नियंत्रण

जायद की फसल मूंग में खरपतवार की समस्या ज्यादा नहीं होती है फिर भी खरपतवार दिखने पर उन्हें उखाड़ देना चाहिए।

सिंचाई–

सामान्यतया जायद में इस फसल काश्त हेतु 2–3 सिंचाईयों की आवश्यकता होती है। पहली सिंचाई बुवाई के समय पर करनी चाहिए। दूसरी एवं तीसरी सिंचाई फूल एवं फली बनने की अवस्था पर सिंचाई जल की उपलब्धता के आधार पर करनी चाहिए।

रोग व कीट –

सफ़ेद मक्खी –

यह एक रस चूसने बाला कीट है और यह कीट पीतशिरा मोजेक नामक रोग को फेलाने में भी सहायक होता है इसकी उपस्थिति से फसल को बहुत अधिक नुकसान होता है।

फली छेदक –

यह कीट काटने व चबाने वाले होते है यह फली में छेद कर के दाना खा जाता है। इस कीट से फसल को बहुत अधिक नुकसान होता है।

पीतशिरा मोजेक-

यह रोग एक वायरस जनित रोग है जो सफ़ेद मक्खी से फेलता है इस रोग के कारण सबसे पहले पत्तियों पर गोलाकार धब्बे बन जाते है बाद में पूरी की पूरी पत्तिया पीली पड़ जाती है और अंत मै पौधा मुरझाकर सूख जाता है।

उपज

मूंग को फलियों को 2–3 बार में तोड़ कर अच्छे से सुखा कर इसकी थ्रेसिंग की जाती है। फसलानुकुल वातावरण होने पर फसल की उपज 6–9 क्विंटल/हेक्टेयर तक प्राप्त हो जाती है।

जैविक विधिया

बीजामृत

बीजामृत का प्रयोग बीजोपचार के लिए किया जाता है। कई रोग ऐसे होते है जो बीजजनित होते है तथा सिर्फ बीजो से ही फैलते है। अतः बीजशोधन के लिए बीजोपचार करना आवश्यक हो जाता है। बीजामृत बनाने के लिए निम्न जैविक सामग्री की आवश्यकता होती है –सामग्री–

- गायकागोबर– 5 किग्रा.
- गौमूत्र– 5 लीटर
- चूना– 50 ग्राम
- जल– 20 लीटर
- जंगल / पेड़केनीचेकीमिट्टी 50 ग्राम

बनाने व उपयोग करने की विधि– गौ मूत्र में जल को मिलाकर गोबर, चूना तथा पेड़ के तल की मिट्टी मिला का अच्छी तरह से इसका मिश्रण बना ले। इस मिश्रण को 24 घंटे तक छाया में रखना चाहिए। तत्पश्चात 100 किलो गेहूं के बीज को फर्श पर रख कर उस पर बीजम्रत का छिडकाव करते है। छिडकाव के बाद बीज को अच्छी तरह से मिला देते है ताकि बीजम्रत की परत बीज पर अच्छी तरह चढ़ जाये। बीजम्रत से उपचार करने के बाद बीज को छाया में सुखा कर 24 घंटे बाद बुबाई करनी चाहिए।

जीवामृत

जिस प्रकार से मनुष्य को पोषण की आवश्यकता होती है ठीक उसी प्रकार से फसलो को भी पोषण की आवश्यकता होती है। उचित पोषण से पौधों में रोगों एवं कीटो के प्रति सहनशीलता बढती है। बिना पोषण के फसल का उत्पादन ठीक से नहीं हो सकता है। इसलिए फसल को अतिरिक्त पोषण देने के उद्देश्य से जीवामृत का छिडकाव किया जाता है। जीवामृत फसल को अतिरिक्त पोषण देने के साथ साथ दाने को चमकदार भी बनाते है।

जैव सामग्री–

- गाय का गोबर– 10 किग्रा.
- गौमूत्र– 5 – 10 लीटर
- गुड– 1 किग्रा.
- चने / मसूर का आटा (बेसन) – 1 किग्रा.
- जंगल / पेड के नीचे की मिट्टी – 50 ग्राम
- जल– 200 लीटर ।

बनाने व उपयोग करने की विधि– बताई गई जैव सामग्री को प्लास्टिक के ड्रम में 200 लीटर पानी के साथ अच्छे से मिलाकर ड्रम के ढक्कन को बंद कर के छाया में रख दे। अब इस घोल को दिन में एक बार डंडे की सहायता से अच्छी तरह से मिलाये। 17 दिन में जीवाम्रत उपयोग हेतु तैयार है। जीवाम्रत का 200 लीटर / एकड़ की दर से खड़ी फसल में 15–20 दिन के अन्तराल पर छिडकाव करना चाहिए। 5–6 छिडकाव उसके पोषण हेतु पर्याप्त होते है।

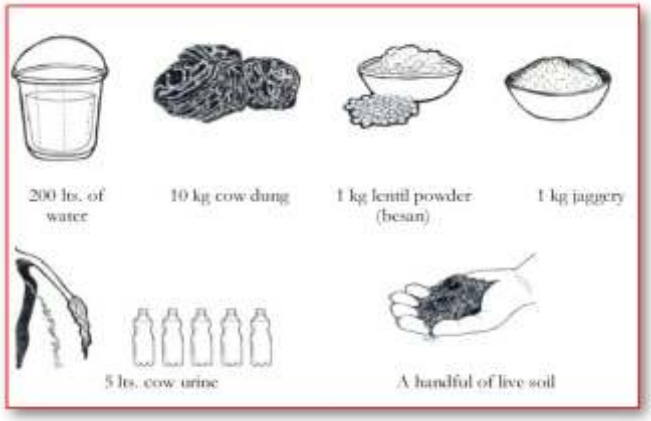

संजीवक

रसायनों के अत्याधिक उपयोग के कारण आज मृदा में सूक्ष्म जीव समाप्त होने की कगार पर है। इन जीवो को बढाने के उद्देश्य से संजीवक का उपयोग खेतो में किया जाता है। संजीवक खेत में सूक्ष्म जीवो को बढाने का कार्य करता है। सूक्ष्म जीवो की बढोत्तरी से मृदा की उर्वराशक्ति में बढवार होकर फसल उत्पादन में भी बढोत्तरी होती है।

जैविक सामग्री–

- गाय का गोबर– 30 किग्रा.
- गौ मूत्र – 3 लीटर
- गुड – 500 ग्राम
- जल – 100 लीटर

बनाने व उपयोग करने की विधि– ऊपर दी गई जैव सामग्री का घोल बना कर 10 दिन तक इसे सड़ने दें। इस घोल को खेत के चारों किनारों एवं बीच में डालने से सूक्ष्मजीव पूरे खेत में फ़ैल जाते हैं। संजीवक का प्रयोग प्रथम वर्ष में 1000 ली./एकड़, द्वितीय वर्ष में 800 ली./एकड़ व तृतीय वर्ष में 600 ली./एकड़ तक करना चाहिए। इसके अच्छे परिणाम के लिए प्रति एकड़ 3 टन गोबर की खाद प्रत्येक तीन वर्षो में कम से कम एक बार अवश्य उपयोग में ली जानी चाहिए।

पंचगव्य

पंचगव्य का प्रयोग फसल वृद्धि हार्मोन के रूप में किया जाता है। पंचगव्य फसल व मिट्टी की उर्वरता को बढाने में सहायक होते है। इसके प्रयोग से भूमि में निमेटोड की संख्या में भी कमी होती है जिससे निमेटोड द्वारा फसलो में होने वाले नुकसान से बचा जा सकता है।

सामग्री–

- गाय का गोबर– 5 किग्रा.
- गौमूत्र– 1 लीटर
- गाय का दूध – 2 लीटर
- गाय का घी– 1 लीटर
- दही– 2 लीटर

बनाने व उपयोग करने की विधि– उपरोक्त जैविक सामग्री को मिट्टी के बर्तन में अच्छी तरह मिश्रित कर एवं ढककर पंचगव्य तैयार करे। इसके तीन प्रतिशत घोल को 4–5 बार फसल पर छिडकाव करने से उपज में वृद्धि की जा सकती है। इसके तीन छिडकाव, 15 दिन के अन्तराल पर, बुवाई से फूल आने की अवस्था तक, बाद में फली आने व दाने भराव पर 10 दिन के अन्तराल पर दो छिडकाव करना उपज वृद्धि में सहायक होता है।

अमृत पानी

दाने की मजबूती व पौधों की मजबूती बनाये रखने के साथ ही पौधों पर फलन वृद्धि हेतु जैविक पद्धति द्वारा निर्मित घोल का छिडकाव करना चाहिए। इस हेतु अमृत पानी अथवा सम्रद्ध अमृत का छिडकाव करे।

अमृत पानी बनाने की विधि –

सामग्री –

गौमूत्र –1 लीटर

गोबर – 1 किग्रा.

नीम की सूखी पत्ती – 1 किग्रा.

आक की पत्ती – 1 किग्रा.

बेसन – 1 किग्रा.

गुड़ – 150 ग्रा.

नीम तथा आक के पत्तो को बारीक़ कर लेते है। 1 किग्रा. गौमूत्र में 1 किग्रा. ताजा गोबर अच्छे से मिलाते है तथा इसमें 150 ग्रा. गुड़ घोलकर मिला देते है। इस मिश्रण में 10 लीटर पानी डालकर 1 किग्रा. बेसन से अच्छी तरह से मिला देते है। तत्पश्चात नीम एवं आक के पत्तो को घड़े में डालकर अच्छी तरह से सभी मिश्रण को मिला देते है।

मिश्रण को अच्छी तरह मिलाने के बाद घड़े का मुह मिट्टी एवं गोबर से सील कर देते है। घड़े को 21 दिनों के लिए एक जगह रख देते है व 21 दिनों बाद मिश्रण उपयोग हेतु तैयार हो जाता है।

नीमास्त्र

नीमास्त्र का प्रयोग ऐसे कीटो पर किया जाता है जो फसल की पत्तियों का रस चूसते है व भण्डार गृह में फसल को नुकसान पहुचाते है। ऐसे कीटो के लिए नीमास्त्र एक अच्छा वानस्पतिक कीटनाशक है।

सामग्री –

- नीम की पत्ती– 5 किग्रा.
- गौमूत्र– 5 लीटर
- गाय का गोबर– 2 किग्रा.

बनाने व उपयोग करने की विधि – सबसे पहले नीम के पत्तो को पानी में मिलाकर कुचल दे। तत्पश्चात इसमें गौमूत्र व गोबर डाल दे। अब इसको 24 घंटे के लिए किण्वन हेतु छोड़ दे। अब यह घोल उपयोग के लिए तैयार है। इस घोल को 100 लीटर पानी के साथ पतला कर प्रति एकड़ की दर से उपयोग करना चाहिए।

आग्नेयास्त्र

आग्नेयास्त्र का प्रयोग फसल को काटने वाले कीटो से बचाव के लिए किया जाता है। फली छेदक व अन्य कीट पत्ते, फल एवं फली इत्यादि को काटते है जिससे फसल को बहुत नुकसान होता है। अतः उपज में वृद्धि हेतु इन कीटो को नियंत्रित करना अत्यन्त आवश्यक होता है।

जैव सामग्री –

- गौमूत्र– 10 लीटर
- बेशरमके पत्ते – 1 किग्रा.
- मिर्ची– 500 ग्राम
- लहसुन– 500 ग्राम
- नीम की पत्ती – 5 किग्रा.

बनाने व उपयोग करने की विधि – सभी जैव सामग्री को अच्छी तरह से मिलाकर पूरी तरह से कुचल दे। अब इस कुचले हुए पदार्थ को जब तक उबाले तब तक की यह पदार्थ आधा न बचे। अब इस पदार्थ कोअच्छी तरह से निचोड़ कर छान ले। यह तरल पदार्थ उपयोग हेतु तैयार है। इसे 2–3 लीटर अर्क को 100 लीटर पानी में मिलाकर पतला कर एक एकड़ में छिडकाव करे।

ब्रह्मास्त्र

ब्रह्मास्त्र का प्रयोग फसल को रस चूसने वाले व काटने वाले दोनों ही प्रजाति के कीटो को नियंत्रित करने हेतु किया जाता है।

सामग्री –

- गौमूत्र– 10 लीटर
- नीम की पत्तिया – 3 किग्रा.
- सीता फल की पत्ती – 2 किग्रा.
- पपीते की पत्ती – 2 किग्रा.
- अनारकीपत्तीदृ 2 किग्रा.
- अमरुद की पत्ती – 2 किग्रा.

बनानेव उपयोग करने की विधि – सभी पत्तियों को अच्छी तरह मिलाकर एवं कुचल कर गौमूत्र मिलाये। अब इसे तब तक उबाले जब तक की ये आधा न हो जाये। इस अर्क को अब 24 घंटे के लिए छाया में रखने के बाद ये अर्क उपयोग हेतु तैयार है। एक एकड़ हेतु 2–2.5 लीटर अर्क को 100 लीटर पानी में मिला कर फसल पर छिडकाव करे।

नाडेप

जैविक खाद बनाने की कई विधियां हैं जिसमें नाडेप विधि भी काफी प्रचलित है। यह विधि इसलिए भी अच्छी मानी जाती है, क्योंकि इसमें कम से कम गोबर में अधिक खाद बनाई जा सकती है।

इस विधि में वायु संचार प्रोसेस के जरिए जीवांश से 90 से 120 दिनों में खाद तैयार की जाती है। इसके लिए गोबर, बायोमास यानि कचरा और बारीक मिट्टी की जरूरत पड़ती है। इस विधि से तैयार की गई खाद में 0.5 से 1.5 प्रतिशत नाइट्रोजन, 0.5 से 0.9 प्रतिशत फास्फोरस और 1. 2 से 1.4 प्रतिशत पोटाश तथा अन्य सूक्ष्म तत्व पाए जाते हैं। नाडेप टाकों की मदद से नाडेप कम्पोस्ट तैयार की जाती है।

नाडेप कैसे बनाये –

ईटों की सहायता से नाडेप बनाया जाता है। जिसका आकार 10 फीट लंबा, 6 फीट चौड़ा और 3 फीट उंचा होता है। ईटों को जोड़ते समय इस बात का विशेष ध्यान रखें कि तीसरे, छठे और नोवें रद्दे में मधुमक्खी के छत्ते के समान 6X7 के छेद छोड़ दिए जाते हैं। इन छिद्रों की सहायता से आसानी से हवा मिल सकें। एक पक्के नाडेप या टांके से साल में तीन बार खाद तैयार की जा सकती है।

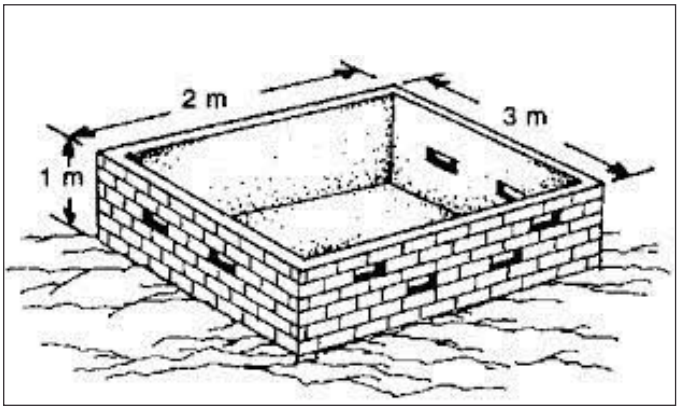

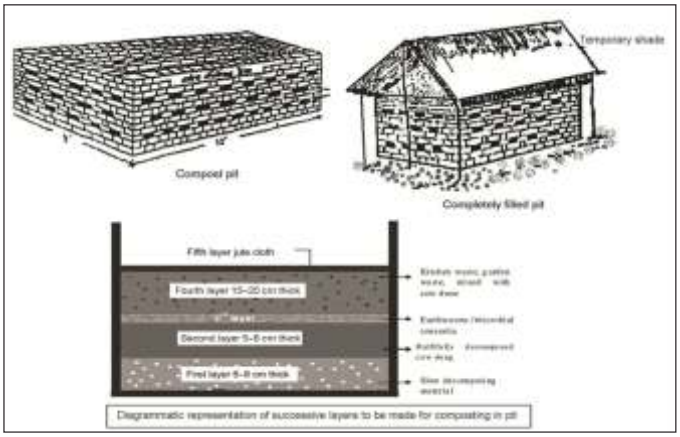

कैसे भरे इस विधि में परत दर परत पर विभिन्न सामग्रियों को भरा जाता है। भराई से पहले टांके की दीवारों को गोबर के लेप से लिपाई कर दे। इसके बाद पहली परत पर विभिन्न वानस्पति सामग्री जैसे सूखे पत्ते, डंठल, कचरा, टहनियों को 6 इंच तक भर दे। दीमक नियंत्रण के लिए नीम और पलाश की पत्तियों को जरुर डाले। अब दूसरी परत में तीन से चार किलो गोबर का घोल बनाकर वानस्पति सामग्री के ऊपर दाल दे। अब तीसरी परत पर 50 से 60 किलो छनी हुई मिट्टी की परत बना दे। बता दे की 11 से 12 परतों में पूरी सामग्री भर जाएगी। इसके बाद टांके को 400 से 500 किलो मिट्टी की परत बनाकर गोबर से लिपाई का दे। 15 से 20 दिनों बाद जब सामग्री 8 से 9 इंच तक सिकुड़ जाए तब दूसरी भराई कर के टांके को अच्छी तरह से ढंक दे। 3 से 4 महीने बाद नाडेप कम्पोस्ट तैयार हो जाती है।

वर्मीकम्पोस्ट

केंचुआ के द्वारा जैविक पदार्थों के खाने के बाद उसके पाचन–तंत्र से गुजरने के बाद जो उपशिष्ट पदार्थ मल के रूप में बाहर निकलता है उसे वर्मी कम्पोस्ट या केंचुआ खाद कहते हैं। यह हल्का काला, दानेदार या देखने में चायपत्ती के जैसा होता है यह फसलों के लिए काफी लाभकारी होता है। इस खाद में मुख्य पोषक तत्व के अतिरिक्त दूसरे सूक्ष्म पोषक तत्वभी पाए जाते हैं जो पौधों की वृद्धि के लिए लाभदायक होते हैं। वर्मी कम्पोस्टिंग में स्थानीय केंचुओं की किस्मों का प्रयोग करना चाहिए ।

वर्मी कम्पोस्ट बनाने की विधि – केंचुआ खाद बनाने के लिए पहले ऐसे स्थान का चुनाव करें, जहाँ धूप नहीं आती हो, लेकिन ध्यान रखे कि वो स्थान हवादार हो। ऐसे छायादार स्थान पर 2 मीटर लंबा एवं 1 मीटर चौड़ी जगह

के चारों ओर एक मेड़ बना लें जिससे कम्पोस्टिंग पदार्थ इधर–उधर होकर बेकार न हो। अब सबसे पहले नीचे तल पर 6 इंच की एक परत जिमसें आधा सड़ा हुआ गोबर या वर्मी कम्पोस्ट हो, उसमें थोडा उपजाऊ मिट्टी मिलाकर फैला दें। जिसमें केंचुआ को प्रारंभिक अवस्था में भोजन मिल सकें। इसके बाद 40 केंचुआ प्रति वर्ग फीट के हिसाब से उसमें डाल दें।उसके बाद घर एवं रसोई घर की सब्जियों के अवशेष आदि की एक परत डालें जो लगभग 8–10 इंच मोटी हो जाए।दूसरी परत को डालने के बाद पुआल, सुखी पत्तियां, गोबर आदि को आधा सड़ाकर दूसरे परत के ऊपर डालें। प्रत्येक परत के बाद पानी का छिड़काव् करें जिससे परत में नमी बनी रहे ।अंत में 3–4 इंच मोटी गोबर की परत डालकर ऊपर से ढँक दें तथा ऊपर बोरा डाल दें जिससे केंचुए आसानी से ऊपर नीचे घूम सकें। प्रकाश की उपस्थिति में केंचुओं का आवगमन कम हो जाता है जिससे खाद बनाने में समय लग सकता है इसीलिए इसे ढंकना आवश्यक हो जाता है। लगभग50–60 दिनों में वर्मी कम्पोस्ट खाद तैयार हो जाएगी। सबसे ऊपर के परत को हटाएं तथा उसमें से केंचुओं को चुनकर निकाल लें। इस प्रकार नीचे की परत को छोड़कर बाकी खाद इकट्ठा कर लें। छलनी से छानकर , केंचुओं को अलग किया जा सकता है।

वर्मीकम्पोस्ट खाद से लाभ –

1. केंचुआ द्वारा तैयार खाद में पोषक तत्वों की मात्रा साधारण कम्पोस्ट की अपेक्षा अधिक होती है।
2. भूमि की उर्वरता में वृद्धि होती है।
3. फसलों की ऊपज में वृद्धि होती है।
4. इस खाद का प्रयोग मुख्य रुप से फलदार –पौधों एवं किचन गार्डन में किया जा सकता है, जिससे फूल एवं फल के आकार में वृद्धि होती है।

5. वर्मी कम्पोस्ट खाद के प्रयोग से मिट्टी में वायु का संचार सुचारू रूप से होता है।
6. यह खाद भूमि संरचना एवं भौतिक दशा सुधारने में सहायक होता है।
7. इसके प्रयोग से भूमि की दशा एवं स्वास्थ्य में सुधार होता है।
8. कार्बिनक पदार्थों का विघटन करने वाले एंजाइम भी इसमें काफी मात्रा में होते है जो वर्मी कम्पोस्ट के एक बार प्रयोग करने के बाद लंबे समय तक भूमि में सक्रिय रहते हैं।
9. इसके प्रयोग से मिट्टी की भौतिक संरचना में परिवर्तन होता है तथा उसकी जलधारण क्षमता में वृद्धि होती है।

वर्मीकम्पोस्ट बनाने में सावधानियां –

1. वर्मी कम्पोस्ट खाद बनाते समय यह ध्यान रखें कि नमी की कमी न हो। नमी बनाये रखने के लिए आवश्कतानुसार पानी का छिड़काव करें।
2. खाद बनाते समय यह ध्यान रखें कि उनमें ऐसी सामग्री का प्रयोग नहीं करे जिसकी सड़न क्रिया नहीं होती है अथवा जो पदार्थ सड़ता नहीं है जैसे– प्लास्टिक, लोहा, कांच इत्यादि का प्रयोग नहीं करें।
3. कम्पोस्ट ढेर को ढंककर रखें।
4. चींटी एवं मेढ़क आदि से केंचुओं को बचाकर रखेंये इनके शत्रु होते हैं।
5. कीटनाशक दवाओं का प्रयोग नहीं करें।
6. खाद बनाने की सामग्री में किसी भी तरह के रसायनिक उर्वरको को नहीं मिलाएं।

कल्चर कैसे बनाये

आवश्यक सामग्री

- कल्चर पैकेट 3 पैकेट
- पानी 1 या 2 लीटर
- गुड़ 200 से 300 ग्राम

कल्चर बनाने की विधि –

उपचार के लिए 1 लीटर पानी में 200 से 300 ग्राम गुड़

डालकर गर्म कर के घोल बनाये और ठंडा होने पर इसमें 3 पेकेट राइजोबियम कल्चर मिलाये और घोल को धीरे धीरे लकड़ी की सहायता से हिलाए। इतना घोल एक हेक्टेयर में बोए जाने वाले बीज के लिए पर्याप्त है। अब इस घोल को बीजो पर धीरे धीरे छिडकाव कर बीज को अच्छी तरह से मिला दे जिससे घोल की परत बीज पर अच्छी तरह चढ़ जाये। अब इस बीज को थोड़ी देर छायादार स्थान में सूखाकर फिर इसकी बुवाई करे।

सावधानियाँ

- प्रत्येक दलहन को उसके विशेष कल्चर से उपचारित करना चाहिए। अन्य फसल के कल्चर का प्रयोग करने से जड़ों में गांठे नहीं बनेगी और कल्चर का फायदा फसल को नहीं मिलेगा।
- पैकेट पर लिखी अंतिम तिथि के पूर्व कल्चर का प्रयोग करना चाहिए।
- बीज उपचार की तैयारी करने के बाद अंत में राइजोबियम का पैकेट खोलना चाहिए।
- बीज उपचार के तुरंत बाद बीज बो देना चाहिए या कुछ समय के लिए छायादार जगह पर सुखाएँ फिर बुवाई करें।
- गुड़ और पानी के गरम घोल के ठंडे होने के उपरांत धीरे–धीरे कल्चर को डालें।

VAAGDHARA

Head Office:
Village and Post Kupra, District Banswara, Rajasthan (India)
Ph: 9414082643 | Email: vaagdhara@gmail.com | Web: www.vaagdhara.org

State Coordination Office:
A-38, Bhan Nagar, Near Queens Road, Vaishali Nagar, Jaipur, Rajasthan
Ph: +91 141 2351582